International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

भारतीय भाषाओं का एतिहासिक संदर्भ

सुशील कुमार
शोधार्थी
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय,
रोहतक

भारतवर्ष की भूमि पर सैन्धव सभ्यता के लोग चित्रात्मक लिपि का प्रयोग करते थे। लेकिन अभी तक इस भाषा को पढ़ा नहीं गया है। बहुत से विद्वान मानते है कि सैन्धव सभ्यता में व्यापारी वर्ग शासन करता था। अतः यह भाषा व्यापारी वर्ग अपनी व्यापारिक सुविधाओं के लिए प्रयोग करता था।[1] इस प्रकार से यह समकालीन राजदरबार की भाषा रही होगी।

1500 ई.पू. से 600 ई.पू. वैदिक युग में बौद्धिक चिन्तन का विकास हो रहा था। वैदिककालीन ऋषि–मुनियों की ऋचाओं और मंत्रों के व्यवस्थित अध्ययन और धर्म की व्यावहारिक आवश्यकताओं से कालान्तर में 'वेदांगों' का जन्म हुआ। वेदांग छः हैं व्याकरण, शिक्षा (उच्चारण), कल्प (कर्मकाण्ड), निरुक्त (शब्द विज्ञान), छन्दस (मीटर) और ज्योतिष। इन वेदांगों का उद्देश्य वैदिक स्थलों की व्याख्या रक्षा और प्रयोग करना था। वेदांगों में सबसे महत्वपूर्ण ग्रंथ वे हैं जो यज्ञ प्रकियाओं, शिक्षा–व्युत्पति तथा व्याकरण से संबंध रखते हैं। यहाँ पर हम विशेष रूप से महर्षि यास्क के 'निरुक्त' का उल्लेख कर सकते हैं। 'निरुक्त' व्याकरण और व्याख्या के अतिरिक्त विशुद्ध संस्कृत गद्य का पहला उदाहरण है। प्रादेशिक बोलियों का पंजाब की प्राचीन वैदिक भाषा से उदय इस काल की एक विशिष्ट उपलब्धि थी। मध्यप्रदेश में बोली जाने वाली यह नयी भाषा सुसंस्कृत और प्रतिनिधि भाषा मानी जाने लगी। 'प्राकृतों' से भिन्न इसकी संज्ञा 'संस्कृत' हुई। अनेक वैयाकरणें ने इसकी व्याख्या की और इसका रूप निखरा। अनेक वैयाकरणों में पाणिनी विशेष प्रख्यात हुआ। धीरे–धीरे संस्कृत अभिजात कुलीन शिक्षित समुदाय की भाषा बन गयी।[2] 323 ई.पू. से 184 ई.पू.

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

तक मौर्य साम्राज्य के समय में भी संस्कृत ब्राह्मणों और पण्डितों की धार्मिक और साहित्यिक भाषा के सम्मानित पद पर बनी रही। देश के विभिन्न विद्याकेन्द्रों में शास्त्रीय एवं व्यावहारिक विषयों के लिये ब्राह्मण वर्ग संस्कृत का प्रयोग करता था। उच्च वर्गों के अलावा जनसाधारण में भी संस्कृत भाषा का प्रचलन था, लेकिन मौर्य शासक अशोक के समय संस्कृत की अपेक्षा स्थानीय बोलियों का प्रतिदिन के व्यावहार और प्रशासन तथा बौद्ध एवं जैन धर्म ग्रंथों के निर्माण में अधिक प्रचलन हो गया था। अशोक के अभिलेखों से उस समय की प्रचलित तीन प्रकार की लोकभाषाओं अथवा प्राकृतों का परिचय मिलता है। ये लोक भाषाएँ आर्य भाषा संस्कृत की ही तीन विशिष्ट बोलियाँ थी।[3]

184 ई.पू. से 78 ई.पू. भारत में मुगलकालीन राजाओं के दरबार में प्राचीन संस्कृत भाषा का पुनःउत्थान हुआ। मनुस्मृति जैसे हिन्दू धर्म के विधि ग्रन्थ की रचना संस्कृत भाषा में मनु ने शुंगकाल में ही की थी। अतः यह काल संस्कृत के पुर्नजन्म का काल कहलाता है।"[4] प्राकृतों का उदय जनबोलियों से हुआ और उन्हीं के संस्कार से संस्कृत बनी। पर जिन प्राकृतों पर हम यहाँ विचार कर रहे हैं और जो प्राकृतें गुप्तकाल में प्रयुक्त हुई, वे साहित्यकार प्राकृतें थी। उनका उपयोग क्षेत्रीय साहित्य शैलियों की तरह हुआ। सर जार्ज ग्रियर्सन ने इनके तीन भेद किये हैं।[5]

1. मूल प्राकृतः जिनके साहित्यिक रूप वैदिक भाषा और उसके बाद की संस्कृत है।
2. मध्यवर्ती प्राकृतः जिनकी प्रतिनिधि पालि, वैयाकरणों की प्राकृतें और नाटकों आदि की प्राकृति है।
3. व्याकरणों के अपभ्रंशः इस विभाजन को स्वीकार करना कई कारणों से संभव नहीं, विशेषकर इस कारण भी इनका उत्तरोतर विकास एक के बाद एक नहीं हुआ।

अशोक के अभिलेखों में वस्तुतः पहली प्राकृतों के दर्शन होते हैं। दूसरे प्राकृत के दर्शन अश्वद्योत के नाटकों में मिलने हैं। प्राकृत भाषा के व्याकरण हेतु वररूचि ने 'प्राकृत प्रकाश' की रचना की। चण्ड ने प्राकृत लक्षण की रचना की।

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

अतः मूलतः यह ग्रन्थ संस्कृत भाषा में लिखे गये हैं। बौद्ध साहित्य अधिकतर प्राकृत भाषा में है। वहीं जैन साहित्य पालि भाषा में लिखा गया है। पालि भाषा का व्याकरण काल्यापन प्रकरण ने पालि भाषा में ही किया है। पांचवीं सदी के बुद्धघोष ने इस ग्रन्थ का उल्लेख किया है।

कुषांण वंश मध्य एशिया की सी–यू–ची जनजाति से संबंधित था। कुषाण शासक कनिष्क के सिक्कों पर केवल ग्रीक भाषा में लेख खुदे मिले हैं। ग्रीक नाम–हिरैक्लीज, सिरापिज, ग्रीक नामधारी सूर्य और चन्द्र–हेलिओस और सेलिनी, मीइरो (सूर्य), अथ्रों (अग्नि) नयाइया, शिव आदि। हालाँकि कुषाण शासक कनिष्क ने बौद्ध धर्म की महायान शाखा का प्रचार–प्रसार किया। गंधार कला शैली उसी के समय की देन है। कनिष्क के काल में पार्श्व की सलाह पर वसुमित्र और अश्वघोष की देखरेख में काश्मीर में बौद्ध सभा हुई जिसमें संस्कृत में विभाषशास्त्र जैसे ग्रन्थ लिखे गये।"[6]

दक्षिण भारत की साहित्यिक भाषाओं में तमिल भाषा का वर्चस्व संगम युग से ही रहा है। संगम कालीन राजवंश, चेर, चोल, पांडय की राजकीय भाषा तमिल ही थी। तमिल साहित्य का विकास दक्षिण भारत में बौद्ध और जैन धर्म के माध्यम से अधिक हुआ। चौथी सदी ई. में मौर्य चन्द्रगुप्त मगध में पड़े अकाल के कारण जैन गुरु भद्रबाहु के साथ मैसूर में श्रवण बेलगोला चला गया था। तोलकपियर की रचना तोलकाप्पियम जोकि तमिल भाषा की व्याकरण है, की रचना भी जेन धर्म के संतों ने की है। कुरूल (काव्य) की भी रचना जैनों की ही देन है। मणिमेखलई ग्रन्थ बौद्ध काव्य है। जीवका चिन्तामणि, सिलपादिकारम्, नीलकेशि, यशोधर काव्य जैन धर्म से सम्बन्धित ग्रन्थ है। इन सबके अलावा दक्षिणी भारत के साहित्य का विकास नायनार और आलवर संतों (शैव व वैष्णव सम्प्रदाय) ने भी किया है। मैक्समूलर ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'हिस्टर आफ संस्कृत लिटरेचर' में यह मत स्थापित किया है कि ईसा की आरम्भिक शताब्दियों में विदेशी शकों के आक्रमणों के कारण भारत के अशान्त एवं विक्षुब्ध राजनीतिक वातावरण में काव्य की उन्नति संभव नहीं थी। अतः यह अन्धकारमय युग संस्कृत काव्य की उन्नति संभव नही थी । अतः यह अन्धकारमय युग

संस्कृत काव्य की घोर निशा का काल है। इस निद्रा का भंग और काव्य–कल्पना के मंगलमय प्रभाव का अभ्युदय तब हुआ, जब गुप्त साम्राज्य का उत्कर्ष हुआ। यह समय संस्कृत काव्य के पुनर्जागरण का था। उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि मैक्समूलर की यह कल्पना भ्रान्तिपूर्ण है। रूद्रदामन जैसे विदेशी शक राजा संस्कृत काव्य रचना में परम प्रवीण तथा इसे प्रोत्साहन देने वाले थे। कनिष्क ने अश्वघोष जैसे संस्कृत के कवियों को राजसंरक्षण प्रदान किया। अतः इस युग को संस्कृत साहित्य का घोर निशाकाल कहना ठीक नहीं है।

605 ई. में हर्षवर्धन का थानेसर (कुरुक्षेत्र) में साम्राज्य था। राजा हर्ष के दरबार में संस्कृत के विद्वान बाणभट्ट थे जिन्होनें हर्षचरित्र और कादम्बरी की रचना की थी। स्वयं हर्ष ने तीन संस्कृत ग्रन्थों की रचना की (प्रियदर्शिका, रत्नावली, नागानन्द)। साहित्य के विकास में आधुनिक भातीय आर्यभाषा के उदय के पूर्व तथा अपभ्रंश के बाद भी भाषा–स्थिति को पुरानी हिन्दी को संज्ञा दी जाती है। आचार्य हेमचन्द्र (12वीं शती) द्वारा रचित अपभ्रंश व्याकरण इस विषय में प्रमाण है। कि इस समय तक अपभ्रंश भाषा पूर्ण रूप से साहित्य में रूढ़ हो चुकी थी। 16वीं शती से भारतीय आर्य भाषा के ऐसे रूप उपलब्ध होते हैं जो परिनिष्ठित हिन्दी से काफी साम्य रखते हैं। 12वीं और 16वीं शती के मध्ययुगीन हिन्दी भाषा रूप ने यद्यपि अपभ्रंश के मोह को छोड़ दिया, परन्तु उसके प्रभाव से मुक्त न हो सकी।"[7] तत्कालीन भाषाओं में इसी समय से आधुनिक भारतीय आर्यभाषा के बीज दृष्टिगोचर होने लगे। विद्वानों ने हिन्दी के इस काल के रूप को अवहट्ट, परवर्ती, अपभ्रंश और पुरानी हिन्दी नाम दिया है।"[8]

हिन्दी क्रिया रूपों के विकास में पुरानी हिन्दी के क्रिया रूपों का पर्याप्त योगदान है। अपभ्रंश काल से ही कृदन्तों के योग से क्रिया–निर्माण की पद्धति चली आ रही है। परन्तु वास्तव में इस प्रकृति का पूर्ण विकास पुरानी हिन्दी से ही दिखाई देता है। इसी के प्रभाव स्वरूप आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में संयुक्त क्रियाओं का महत्वपूर्ण प्रयोग देखा जाता है।

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

पुरानी हिन्दी के क्रिया रूपों के अध्ययन के लिए पर्याप्त सामग्री उपलब्ध नहीं है। सनेध्य रासय (संदेशरासक), प्राकृतपैंगलम्, पुरातन प्रबंध संग्रह, उक्ति–व्यक्ति प्रकरण, वर्णरत्नाकर, कीर्तिलता, चर्यापद तथा ज्ञानेश्वरी इस काल की प्रमुख कृतियाँ है।

मध्यकालीन भारत में चन्दरबरदायी के प्रसिद्ध 'पृथ्वीराज रासों' के अतिरिक्त चन्द्र के समकालीन, 'जगनिक' ने आल्हा–उदल की कथा पर आधारित एक काव्य 'आल्हखण्ड' लिखा। इसके बाद प्रसिद्ध लेखक 'सारंगधर' और खुसरों के नाम आते हैं जिन्होंने हमीर रासों और हमीर काव्य की क्रमशः रचना की थी। अमीर खुसरों हिन्दी का भी प्रेमी था इसलिए उसने अपनी फारसी पुस्तक आशिकी में हिन्दी शब्दों का प्रयोग किया है। खुसरो की कविताओं में अनेक हिन्दी एवं संस्कृत शब्दों का भी प्रयोग हो जाता था।

गोरखनाथ 14वीं सदी के प्रसिद्ध लेखक थे। उत्तरी भारत में भक्ति आन्दोलन के फलस्वरुप हिन्दी साहित्य का पर्याप्त विकास हुआ। 'नामदेव' जो मराठी के लेखक थे। इन्होंने हिन्दी में अनेक कविताओं की रचना की जो ग्रन्थ रामानन्द में सुरक्षित है। रामानन्द के शिष्य कबीर ने हिन्दुओं एवं मुसलमानों की कटु आलोचना की तथा उनके सिद्धांतों को 'साखी' के अन्तर्गत संग्रहित किया। कबीर के समकालीन नानक ने पंजाबी तथा हिन्दी मिश्रित भजन लिखे। मेवाड़ की राजकुमारी मीरांबाई भगवान कृष्ण के प्रेम में अनेक पद लिखे जो अब तक प्रेमपूर्वक गाये जाते हैं और हिन्दी भाषा की निधि है। 'राधाकृष्ण' सम्प्रदाय ने हिन्दी को प्रोत्साहन दिया। इनमें प्रमुख कवि विद्यापति ठाकुर और विट्ठलनाथ थे।

उर्दू की तरह हिन्दी अपनी आधुनिक सूरत को अठारहवीं शताब्दी के अन्तिम चरणों में आते आते ही देख पाई और मध्यकाल की तरह आधुनिक युग में भी हिन्दी साहित्य की विचारधारा लौकिक व पारलौकिक–दोनों ही बनी हुई है। अठाहरवीं शताब्दी के अन्तिम वर्षों में 'सुखसागर' के लेखक सदासुखलाल और रानी केतकी कहानी के लेखक इंशाअल्ला खाँ खड़ी बोली के ही लेखक थे। इसके पूर्व खड़ी बोली लड़खड़ाती अवस्था में थी। अवधी और ब्रजभाषा

आदि अपना घर किये हुए थी। हिदुवानी हिन्दी से किनारा कर रही थी परन्तु संस्कृत इसका पीछा नहीं छोड़ रही थी। मुगलकालीन हिन्दी की यही विशेषता थी।[9]

1526 ई. के पश्चात प्रसिद्ध महाकाव्य 'पद्मावत' के रचयिता मलिक मोहम्मद जायसी प्रथम प्रसिद्ध लेखक हुए। इसमें चितौड़ की रानी पद्मिनी की कथा है। फारसी की तरह हिन्दी के लिये भी अकबर का युग स्वर्ण युग ही सिद्ध हुआ है। हिन्दी कविता में अकबर की तीव्र अभिरूचि और राज्यश्रय ने हिन्दी साहित्य को खूब प्रोत्साहित किया।

मध्यकालीन मुस्लिम राज्यों की राजदरबारी भाषा फारसी रहीं क्योंकि मुस्लिम ही उच्च पदों पर विराजमान थे। अतः उन्होंने अपनी सुविधा के लिए फारसी भाषा को बढ़ावा दिया। सल्लतनत काल से मुगलकाल तक फारसी के साहित्य में उल्लेखनीय उन्नति हुई। इस राजवंशों के दरबारों में अनेक कवियों ने संस्कृत, हिन्दी व अन्य भारतीय भाषाओं में लिखे ग्रन्थों का फारसी में अनुवाद किया। अतः फारसी भाषा साहित्य के हिसाब से अतुलनीय खजाने के रूप में उभरी।

भारतीय मध्यकालीन युग में हिन्दी व फारसी के मिश्रण से नयी भाषा उर्दू का जन्म हुआ। पहले उर्दू का प्रयोग सेना की सैनिक छावनियों में किया जाता था। अकबर के शासन काल में उर्दू भाषा का बहुत तेजी से विकास हुआ। औरंगजेब के बाद आने वाले शासकों के समय तो उर्दू भाषाा राजदरबारी भाषा का रूप में चुकी थी। राजकाज के सभी कार्य उर्दू में ही होने लगे थे।[10]

दक्षिणी भारत के विजयनगर साम्राज्य के राजवंश ने तेलगू भाषा को बढ़ावा दिया। तुलुब वंश का शासक कृष्णदेवराय महान विद्याप्रेमी था, उसने तेलगू में 'आयुक्तमाल्यद' ग्रन्थ की रचनाा की। उसका शासनकाल तेलगू साहित्य का क्लासिकी युग था, उसके दरबार को तेलगू के आठ महान् विद्वान कवि (अष्ट दिग्गज) सुशोभित करते थे।[11]

1813 के चार्टर ऐक्ट में एक लाख रूपया, भारत में शिक्षा–प्रसार के लिए रखा गया और इस प्रकार इस क्षेत्र में एक तुच्छ सा प्रयत्न किया गया।

यह धन, साहित्य के पुनरुद्धार और उन्नति के लिए भारत में स्थानीय विद्वानों को प्रोत्साहन देने के लिए और अंग्रेजी प्रदेशों के वासियों में विलय के आरम्भ और उन्नति के लिए निर्धारित किया गया था। कम्पनी को अपनी प्रशासनिक आवश्यकताओं के लिए ऐसे व्यक्तियों की आवश्यकता थी जो शासकीय और स्थानीय भाषाओं के अच्छे ज्ञाता हो। न्याय विभाग में संस्कृत, फारसी और अरबी भाषा के ज्ञाताओं की आवश्यकता थी ताकि वे लोग अंग्रेज न्यायाधीशों के साथ परामर्शदाता के रूप में बैठ सकें और हिन्दू तथा मुस्लिम कानून की व्याख्या कर सकें। भारतीय रियासतों के साथ पत्र–व्यवहार करने के लिए राजनैतिक विभाग की फारसी पढ़े–लिखें व्यक्तियों की आवश्यकता थी। लोक शिक्षा की सामान्य समिति में 10 सदस्य थे। उनमें दो दल थे– एक प्राच्य विद्या समर्थक दल था जिसके नेता एच. टी. प्रिन्सेप थे। ये लोग प्राच्य विद्या को प्रोत्साहन देने की नीति का समर्थन करते थे। दूसरी ओर था आंग्ल दल जो अंग्रेजी को शिक्षा के माध्यम के रूप में समर्थन देता था। दोनों दलों के बराबर होने के कारण यह समिति ठीक ढंग से कार्य नहीं कर सकती थी। प्रायः गतिरोध हो जाता था। अन्त में दोनों दलों ने अपना विवाद निर्णय के लिए गवर्नर–जनरल के सम्मुख रखा। कार्यकारिणी परिषद का सदस्य होने के अधिकार से 2 फरवरी, 1835 को लार्ड मैकाले ने अपना महत्वपूर्ण स्मरणपत्र लिखा और उसे परिषद के सामने रखा। मैकाले ने आंग्ल दल का समर्थन किया। अंग्रेजी भाषा के उपयोग, महत्व और दावे के विषय में उसने कहा, ''जो कोई यह भाषा जानता है, उसका उस महान् बौद्धिक–ज्ञान जिसे संसार के सबसे बुद्धिमान राष्ट्रों ने उत्पन्न किया और गत 90 पीढ़ियों से हस्तान्तरित किया है, उसको सुगमता से उपलब्ध करने की शक्ति पहले ही प्राप्त है। भारत में यह भाषा शासक वर्ग की भाषा है। स्थानीय लोग भी सरकारी कार्यालयों में इसका प्रयोग करते हैं और यह पूर्वी समुद्रों में व्यापार की भाषा भी बनने वाली है। लार्ड विलियम बैंटिक की सरकार ने 7 मार्च, 1835 के प्रस्ताव द्वारा मैकाले का दृष्टिकोण अपना लिया कि भविष्य में कम्पनी की सरकार यूरोपीय साहित्य को अंग्रेजी माध्यम द्वारा उन्नत करने का प्रयत्न करें और सभी धनराशियाँ इसी निमित्त दी जानी चाहिए। अतः ब्रिटिश

शासन के दौरान अंग्रेजी भाषा में राजकाज के सभी कार्य होने लगे। यह भाषा भारत में भाषीय रूप से एकीकरण स्थापित करने में भी सहायक हुईं। अंग्रेजी के आने से यूरोपीय ज्ञान से भारतीय परिचित हुए। अतः साहित्य जगत में उन्नति हुई।[12]

हिन्दी भाषा हमारे देश में गोदावरी के उत्तर वाले लगभग समस्त भाग में बोली है। ब्रिटिश शासकों ने प्रशासन और न्यायालय में सीमित प्रयोजन के लिए स्थानीय भाषाओं का प्रयोग करने की अनुमति दे दी थी। किंतु उन्होंने हिन्दी के प्रयोग को अनुज्ञात नहीं किया। समस्त उत्तर भारत में उर्दू को न्यायालयों की भाषा के रूप में थोपा गया। इस प्रकार न्यायालयों में और हस्तांतरण पत्र आदि (विक्रय विलेख, बंधक विलेख, पट्टे आदि) लिखने में उर्दू का प्रयोग किया जाने लगा। जब 1906 में मुस्लिम लीग की स्थापना की गई तब से यह कहा जाने लगा कि उर्दू भारत के मुसलमानों की भाषा है। यह कथन तथ्यों को देखते हुए तब भी सही नहीं थे और आज भी मिथ्या है। केरल का मुसलमान मलयालम और तमिलनाडु का तमिल बोलता है। पाकिस्तान में पंजाबी मुसलमान की मातृभाषा पंजाबी है और सिंधी मुसलमान अपनी मातृभाषा के लिए सिंध आंदोलन चला रहा है। बांग्ला देश पाकिस्तान से इसलिए अलग हुआ क्योंकि वहाँ का मुसलमान बंगाली को अपनी राष्ट्रभाषा मानता है।[13]

संदर्भ

1. डॉ0 रमाशंकर त्रिपाठी – प्राचीन भारत का इतिहास, पृ0 सं0 18–19
2. पाणिनी की तिथि विद्धानों में काफी वादविवाद का कारण रही है। कीथ की राय में वह 300 ई0 पू0 के बाद नही रखा जा सकता। (Aotarega Aramgala, P. 21-25)
3. श्री राम गोयल, नन्द मौर्य साम्राज्य का इतिहास, पृ0 सं0 267
4. डॉ0 रमाशंकर त्रिपाठी– प्राचीन भारती का इतिहास, पृ0 144
5. डॉ0 बालमुकुन्द 'हिन्दी क्रिया : स्वरूप और विश्लेषण', पृ0 23

6. सरकार, दि. च., सम. प्राब्लम्स ऑब कुषाण एण्ड राजपूत हिस्ट्री, कलकत्ता, 1969, पृ0 50
7. राधाकमल मुखर्जी, भारत की संस्कृति और कला, पृ0 288
8. डॉ0 बालमुकुन्द, हिन्दी–क्रिया स्वरूप और विश्लेषण, पृ0 70
9. वही, पृ0 124/41
10. श्रीमती सुजाता चौधरी, मध्यकालीन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का इतिहास, पृ0 121
11. रश्मि पाठक, दिल्ली सल्तनत का इतिहास, पृ0 283
12. प्रताप सिंह, आधुनिक भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, पृ0 142
13. ब्रज किशोर शर्मा, भारत का संविधान, एक परिचय, पृ0 335